VOL- VIII ISSUE- IX SEPTEMBER 2021 PEER REVIEW e-JOURNAL IMPACT FACTOR 7.149 ISSN 2349-638x

नारी विवशता : पचपन खंभे लाल दीवारें

-डॉ.व्ही.सी.ठाकुर

स्वातंत्र्योत्तर महिला कथाकारों में उषा प्रियंवदा का स्थान अद्वितीय है। उषा प्रियंवदा ने अपना परिचय देते हुए लिखा है," मेरा जीवन एक पुस्तक है, जिसमें एकदम कुछ खुला है और कुछ एकदम गोप्य-जो मेरा प्राप्य और संचित पूंजी है। जो मेरी प्रेरणा का स्रोत और उत्स है, पर जब वह कहानियां, उपन्यास के माध्यम से पृष्ठों पर बिखरता है तब वह इतना बदला हुआ होता है कि उसमें मेरा कुछ भी अंश नहीं होता शायद आत्मकथा और गल्प में यही अंतर होता है। जीवन अनुभवों, विचारों, अनुभूतियों के एक पतले से तंतु को लेकर एकदम नया संसार गढ़ सकना उसी तरह-तरह के चरित्रों से आबाद करना इसी में मेरी वास्तविकता, प्रेरणा और कल्पना का मिश्रण है।" उषा जी उन कथाकारों में है जिन्होंने आधुनिक जीवन की ऊब, छटपटाहट, संत्रास और अकेलेपन को स्थिति की अनुभूति के स्तर पर पहचाना और व्यक्त किया है। यही कारण है कि उनकी रचना में एक और आधुनिकता का प्रबल स्वर मिलता है तो दूसरी और उन में चित्रित प्रसंगों तथा संवेदना के साथ हर वर्ग का पाठक तादात्म्य का अनुभव करता है। 'पचपन खंभे लाल दीवारें' उषा जी का उपन्यास जिसमें भारतीय नारी की सामाजिक,आर्थिक विवशता से जन्मी मानसिक स्थिति का, व्यवस्था का मार्मिक चित्रण है। छात्रावास के पचपन खंबे और लाल दीवारें उन परिस्थितियों के प्रतीक है जिनमें रहकर सुषमा को ऊब तथा घुटन का तीखा एहसास होता है, फिर भी उससे मुक्त नहीं हो पाती, शायद होना नहीं चाहती, उन परिस्थितियों के बीच जीना ही उसकी नियति है। उषाजी साहित्य में एक अलग प्रकार का जीवन हमारे सामने प्रस्तुत करती है। आरम्भ से अंत तक एक नारी छाई रहती है। सभ्य एवं सुशिक्षित, नौकरी पेशा, विवाहिता होने के नाते इन्होंने इस प्रकार के स्त्रियों की समस्याओं का चित्रण किया है। साथ ही साथ समाज में प्रचलित समस्याओं का चित्रण भी किया है। मानो उनके प्रति मनुष्य को सचेत करने का प्रयास किया है। कहानियों के कथानक अत्यंत छोटे हैं। विषय घरेलू है। पारिवारिक समस्याएं, आर्थिक समस्याएं, नारी विषयक समस्याएं, अधिक रूप में चित्रित है। पात्रों की संख्या कम दिखाई देती हैं। अधिक रूप से पात्रों का उषा जी ने सफलता के साथ मनोविश्लेषण भी किया है। संवादों की सुंदर योजना उषा जी की विशेषता रही है। भाषा अत्यंत सीधी, सरल, नाट्यपूर्ण, पात्रानुकूल, स्वाभाविक दिखाई देती है। सारे तत्वों के होते हुए भी देश, काल, वातावरण का चित्रण उनकी कहानियों का उद्देश्य है। नारी जीवन उनके कथा साहित्य का केंद्र बिंदु रहा है। आधुनिकता के सकारात्मक प्रभाव के साथ-साथ कुछ दुष्प्रभाव नारी चेतना पर हावी है। पचपन खंभे लाल दीवारें की नायिका नौकरी कर रही हैं, जब से पढ़ाई खत्म हुई है, नौकरी करना वह अपनी जिम्मेदारी मानती है, तो कुछ विवशता भी है, वह दिखने में सुंदर होने के कारण कॉलेज के सेक्रेटरी अनेक प्रलोभन उसके सामने रखते हैं। अपने शरीर को बेच कर धन,आराम उसे कतई पसंद नहीं था। पहली नौकरी इन कारणों से जब छोड़ दी थी तब, पिता साल भर बीमार थे। बिना वेतन छुट्टी पर थे, मां कहती थी, इन बच्चों का क्या होगा ? हर बार आर्थिक कठिनाइयों के कारण उसे अपने आभूषण बेचने पढ़ते थे। अपने आपको वह ऐसी नजरों से देखती थी, जैसे सारी मुसीबतों की जड़ वह खुद ही है। जब अधेड़

धनवान वकील से विवाह करने का आग्रह आया सुषमा पत्थर ही हो गई थी, वह कई बार सोचती कि "यह कैसी मां है मेरी, जिंदगी ने उन्हें निचोड़ लिया है। पति को दूसरी पत्नी होने पर उनके कोई अरमान पूरे ना हुए। बहुत सारी खीज और झुझलाहट परिवार पर ही निकालती।" सुषमा को अपने पिता पर भी बड़ा गुस्सा था, यदि वह चाहते तो उसका ब्याह करा सकते थे, औरों के पिता अपनी बेटी के बारे में कितने चिंतित रहते हैं। क्या उसी के पिता अनोखे थे ? उन्होंने कभी यह नहीं चाहा कि सुषमा का विवाह हो क्योंकि उसी से आर्थिक सहारा उन्हें होता था । शादी हो जाएगी तो आर्थिक सहारा सुख जाएगा ? जब वह एम.ए. फाइनल में थी तभी उसकी शादी तय होने में ही थी । पर पिता ने ज्यादा ध्यान नहीं दिया। इसका मां को भी बड़ा अफसोस है। मां पिताजी को समझाते हुए कहती है, "निर्मला को देखो, नौकरी करती है, आराम से रहती है। हमारी सुषमा भी वैसे ही रहेगी। उसे कोई तकलीफ ना होगी।" सुषमा जानती थी कि, रिटायर होने में तीन साल बाकी है, बच्चे छोटे हैं, सुषमा की शादी हो जाती तो सारी आर्थिक गड़बड़ हो जाती, उन्होंने अपना स्वार्थ देखा और सुषमा के कंधों पर परिवार का दायित्व डाल दिया।

दिल्ली के कॉलेज की नौकरी मामूली नहीं थी, यहां पर भी लोग किसी को जाने नहीं देते थे, जवानी में ही उसकी जिंदगी समाप्त हो गई थी। घर का दायित्व उस पर इस कदर छाया हुआ था कि,"मैं केवल साधन हूं। मेरा अपना कोई महत्व नहीं, विवाह करके परिवार को निराधार छोड़ देना, मेरे लिए संभव नहीं। मैंने अपने को ऐसी जिंदगी के लिए डाल दिया है।" बाहर के लोग आकर जब सुषमा की शादी की चर्चा करते हैं तब मां सारा दोष सुषमा पर ही डाल कर अलग हो जाती है। "अब मैं क्या करूं सयानी लड़की है, कोई बच्चा तो नहीं जो समझाने-बुझाने में मान जाएगी। वह शादी करने राजी नहीं होती तो मैं क्या करूं ? मोहल्ले वाले उसकी बात मान जाते। परंतु जब उसकी आँख सुषमा से मिलती तब वह इधर-उधर देखने लगती। सब जानते थे कि इस घर की आय सुषमा का वेतन है।" सुषमा की अपनी मां की दोहरी बातें कभी-कभी खटकने लगती थी। घर में मां का शासन चलता, पिता अस्वस्थ थे, पक्षाघात से पीड़ित। सुषमा मां से अधिक पिता के निकट थी। मां सुषमा की ओर से निश्चित थी उसका सारा ध्यान छोटे बच्चों पर था। सुषमा प्रायः उपेक्षित-सा महसूस करने लगी थी। वह चाहती थी कि मां उसके जीवन में आए बिखराव को नजदीकी से समझे। मां ने सुषमा की छोटी बहन नीरु की शादी का जिक्र किया था। तो सुषमा ने कहा था कि कर्ज लेकर देगी। मां सुषमा को बार-बार कहती नीरू तुम्हारी थोड़ी-सी जिम्मेदारी है। बाप है सो करेंगे, सुषमा सोचती, पिता ऐसा सोचते तो उसकी भी शादी की कभी चिंता करते। पर सुषमा समझदार है, वह जानती है, नीरू उसकी जिम्मेदारी है।

उस समय आर्थिक विषमता ने उसमें दायित्व बोध को जगा दिया था। नौकरी के लिए उसे कहां-कहां नहीं भटकना पड़ा। किस-किस प्रकार की बातें नहीं सुननी पड़ी। अब इस नौकरी को पाकर उसे लगा था कि आर्थिक भंवर में फंसे परिवार को, जीवन नौका को उसने किनारे लगा दिया। "अम्मा ने एक बार कृष्णा मौसी से कहा था कि नीरू के लिए एक साड़ी कड़वादे, साल छः महीने में उसकी शादी होगी तब कृष्णा मौसी को आश्चर्य-सा हुआ था। उसने उसे फटकार ते हुए कहा था "क्या दीदी सुषमा को कुंवारी रखोगी ? इसका ब्याह नहीं करोगी जो अभी से नीरू के लिए दहेज जोड़ने लगी।" अम्मा ने जो सफाई दी उससे वही अपराधी सिद्ध हुई। उसने कहा "सुषमा की शादी तो अब हमारे बस की बात रही नहीं। इतना पढ़ लिख गई अच्छी नौकरी है और अब तो, क्या कहने हैं, हहस्टल में वार्डन बनने वाली है। बांगला और चपरासी अलग से मिलेगा बताओ, इसके जोड़ का लड़का मिलना तो मुश्किल ही है। तुम्हारे जीजा तो कहते हैं, लड़की सयानी है, जिससे मन मिले, उसीसे

कर ले, हम खुशी-खुशी शादी में शामिल हो जाएंगे।" मौसी ने उसे फटकार ते हुए कहा था, जब लड़की सयानी थी, तब आजादी नहीं दी अब उसे लड़का ढूंढने के लिए कह रही हो। "लड़कियां सभी की होती है, शादियां भी सभी की होती है, तुम्हारी तरह हाथ पर हाथ रखकर बैठने वाला कोई नहीं देखा।"

नील द्वारा लाई गई साड़ी पर नीरू ने चाय गिरा दी आने वाले के सामने फूहड़पन से पेश आई। उन लोगों ने कह दिया कि सुंदरता के साथ स्मार्टनेस भी होनी चाहिए। उनके जाने के बाद मां सुषमा पर बरस पड़ती है। उसने रद्दी-सी साड़ी क्यों पहनी ? सुषमा क्रोधित हो कहती है "तुमने मुझे बहुत सारा गहना गढ़ा दिया है न जो पहन लेती। अम्मा ने कहा था, खर्चे कम करोगे तो पैसे बचेंगे ! तो सुषमा कहती है, "जरा अपने दिल के अंदर झांक कर देखो कि तुमने क्या किया मेरा आराम से रहना तुम्हें खटकता है।" तुम शादी तय करो नीरू की, मैं अपने सारे गहने कपड़े उठा कर दे डालूंगी।" उषा प्रियंवदा जी की शैली भावात्मक, विवरणात्मक तथा व्यंगात्मक है। उनके उपन्यासों में विवरण शैली के दर्शन होते हैं, तो कहानियों में भावात्मक तथा व्यंग परिलक्षित है। उनकी सहज कथन शैली तथा यथार्थ का चित्रण बेजोड़ है। भावुकता, माधुर्य और उनकी शैली की विशेषता है। सुषमा को अपनी नौकरी बचाने के लिए अपने प्रेम की कुर्बानी देनी पड़ती है। स्वयं को पचपन खंभे लाल दीवारें में कैद होना पड़ता है। स्त्री की त्रासदी का इससे करुण रूप और क्या हो सकता है।

सुषमा के विरुद्ध लड़कियों और सहयोगी प्राध्यापिकाओं ने जो आरोप लगाए उसे पढ़कर प्राचार्या ने उसका इस्तीफा मांगा था यदि वह दे देती तो नीरू की शादी कैसे करती ? उसने सबसे पहले नील को हॉस्टल आने से मना कर दिया। प्राचार्य जी से माफी मांगी और कॉलेज से लोन निकालकर नीरू की शादी में जुट गई। तब सुषमा का उतरा हुआ चेहरा देखकर मामी ने कहा था, "एक लड़की का गला काट, दूसरी का ब्याह रचा कर बड़ी बीवी ने अच्छा नहीं किया । " उसके कंधों पर छह का बोझ आ पड़ा था। आज की नारी परंपरागत मूल्यों की अपेक्षा सामाजिक मूल्यों को स्वीकार कर रही है। बाधक मूल्यों के विरोध में विद्रोह करने की क्षमता आ गई है। उषा प्रियंवदा(जन्म २४ दिसंबर, १९३०) प्रवासी हिंदी साहित्यकार है। कानपुर में जन्मी उषा प्रियंवदा जी ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी साहित्य में एम.ए.तथा पीएचडी की थी। दिल्ली के लेडी श्री राम कहलेज और इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अध्यापन किया था।

इसी समय उन्हें फुलब्राइट स्कॉलरशिप मिली और वे अमेरिका चली गई। अमेरिका के ब्लूमिंगटन इंडियाना में २ वर्ष पोस्ट डोक्टरल अध्ययन किया और १९६४ में विंसकासीन विश्वविद्यालय, मेडिसिन दक्षिण एशियाई विभाग में सहायक प्रोफेसर के पद पर कार्य प्रारंभ किया। सेवानिवृत्त होकर लेखन और भ्रमण चालू है। उनके साहित्य में छठे और सातवें दशक के शहरी परिवारों का संवेदना पूर्ण चित्रण मिलता है। उषा प्रियंवदा जी को राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल से पद्मभूषण भी प्राप्त हुआ है। पचपन खंभे लाल दीवारें(१९६१) पहला उपन्यास उषा जी का है।

संदर्भ-

1.पचपन खंभे लाल दीवारें-उषा प्रियंवदा
2.स्त्रीवादी साहित्य विमर्श-जगदीश्वर चतुर्वेदी
3.हिंदी उपन्यास में स्त्री अस्तित्व की अभिव्यक्ति-डॉ. वीनारानी यादव
4.साठोत्तरी हिंदी कहानी और महिला लेखिकाएँ-डह. विजयावारद
5.प्रतिध्वनियां-दीप्ति खंडेलवाल
6.स्त्रीवादी महिला उपन्यासकार-डॉ.वैशाली देशपांडे
7.अंतिम दशक के महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में स्त्री विमर्श-डॉ.कृष्णा पोतदार